बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 12 अंक 62

गलती पड़ी भारी

उच्चतम न्यायालय का गत 26 अप्रैल को जारी एक आदेश भारतीय रिजर्व बैंक (आरबीआई) के लिए गहरे आघात जैसा है। उस दिन शीर्ष न्यायालय ने घोषित किया कि बैंकिंग क्षेत्र का नियामक बैंकों की वार्षिक पर्यवेक्षण रिपोर्ट (एआईआर) से जुड़ी सूचनाएं सूचना का अधिकार (आरटीआई) अधिनियम के तहत मुहैया कराने संबंधी वर्ष 2015 के उसके आदेश का अनुपालन करने में नाकाम रहा है। उसने आरबीआई को यह सूचना उपलब्ध कराने का अंतिम अवसर देने के साथ ही एआईआर के खुलासे से संबंधित नीति हटाने को भी कहा है। उसका मानना है कि यह नीति आरटीआई कानून की भावना का उल्लंघन करती है।

हालांकि आरबीआई के क्रियाकलाप को निर्धारित करने वाले आरबीआई अधिनियम में प्रावधान है कि केंद्रीय बैंक को किसी बैंक के लेनदेन संबंधी जानकारियां साझा नहीं करनी चाहिए। लेकिन सर्वोच्च अदालत के मुताबिक, आरटीआई अधिनियम का अनुप्रयोग व्यापक है और इस कानून की धारा 22 में किसी भी अन्य कानून के प्रावधानों का अध्यारोहण करने की शक्ति का जिक्र है। इस अनुभव से हमें दो सबक सीखने की जरूरत है। आरबीआई को अपनी कानूनी रणनीति पर फिर से गौर करना चाहिए। लगता है कि कानूनी ढांचे के बारे में उसकी समझ गंभीर खामियों से ग्रस्त है। आरटीआई कानून वाणिज्यिक बढ़त या भरोसे पर कायम रिश्ते से संबंधित सूचनाओं को खास रियायत देता है। यह साफ नहीं है कि आरबीआई ने उच्चतम न्यायालय में दलील रखते समय इन रियायतों का हवाला क्यों नहीं दिया या वह शीर्ष अदालत को इसके लिए क्यों नहीं मना सका कि ये प्रावधान बैंक पर्यवेक्षण की गोपनीय रिपोर्ट पर भी लागू होते हैं? आरबीआई एआईआर के उन बिंदुओं को संशोधित कर सकता था जो वाणिज्यिक लेनदेन या विश्वासपरक दायित्वों से प्रत्यक्ष संबंध रखते हैं और बाकी सूचनाएं जारी कर देता। सरकार की विभिन्न शाखाओं से आरबीआई को सुरक्षा देने वाले आरबीआई अधिनियम को लेकर केंद्रीय बैंक में अति-आत्मविश्वास नजर आता है। आरबीआई को विश्वास के इस स्रोत पर दोबारा नजर डालनी चाहिए- न केवल न्यायपालिका बल्कि सरकार की अन्य शाखाओं के भी संदर्भ में। अभी तो यही लगता है कि आरबीआई को दलीलें पेश करते वक्त अधिक चपलता दिखानी चाहिए थी। यह ध्यान रखना महत्त्वपूर्ण है कि वित्तीय स्थिरता संबंधी आर्थिक सिद्धांत के नजरिये से सबसे अच्छा नतीजा यही निकलता है कि बैंकों के एआईआर गोपनीय बने रहेंगे। लेकिन बैंक की सेहत के बारे में एक व्यापक स्कोर सार्वजनिक करने के लिए यह जरूरी है कि एआईआर तैयार करते समय इस्तेमाल किए गए आंकड़ों से ही उसे तैयार किया जाए। इसके अलावा आरटीआई के तहत सूचना मांगे जाने पर व्यक्तिगत कर्जदारों के बारे में भी जानकारी साझा करने से परहेज किया जाना चाहिए क्योंकि सभी को एक ही रंग में रंगना अनुचित है। मसलन, अमेरिका में यह विशेष रूप से निषिद्ध है कि पूंजी पर्याप्तता, परिसंपत्ति गुणवत्ता, प्रबंधन, आय, तरलता एवं बाजार जोखिम के प्रति संवेदनशीलता (कैमल्स) रेटिंग एवं परीक्षण रिपोर्ट को किसी भी असंबद्ध पक्ष से साझा किया जाए।

यहां पर आरबीआई एवं वित्त मंत्रालय दोनों गलती पर हैं। आरबीआई को अपनी दलील में बैंकों की पर्यवेक्षण रिपोर्ट की संवेदनशीलता को अधिक अहमियत देनी चाहिए थी। दूसरी तरफ सरकार को भी कानून में बदलाव कर ऐसे प्रावधान करने चाहिए थे कि आरटीआई अधिनियम भी बैंकों की एआईआर को निजी बनाए रखें लेकिन व्यापक आंकड़ो को सार्वजनिक करने का रास्ता साफ हो। इसका यह मतलब भी होता कि उच्चतम न्यायालय के पास हस्तक्षेप का कोई आधार नहीं रह जाता। दुर्भाग्य की बात है कि बैंक एआईआर जैसे मामले की तरह बदलते हुए हालात में भी पहले से लागू कानूनों के संशोधन को लेकर एक तरह की अनमनीयता नजर आती है।

अजय मोहंती

एनबीएफसी-बैंक विलय वक्त का तकाजा?

दूरसंचार या गैस कारोबार की तरह बैंकिंग क्षेत्र में लाइसेंस सबसे बड़े बोलीकर्ता को ही नहीं मिलता है। उसके लिए मुफीद एवं उचित फर्म को तवज्जो दी जाती है। बता रहे हैं तमाल बंद्योपाध्याय

इंडियाबुल्स हाउसिंग फाइनैंस लिमिटेड और लक्ष्मी विलास बैंक के विलय की घोषणा के एक दिन बाद जारी भारतीय रिजर्व बैंक (आरबीआई) की विज्ञप्ति ने यह साफ कर दिया कि फिलहाल इस विलय प्रस्ताव को उसने अनुमति नहीं दी है। इस विलय से बनने वाला इंडियाबुल्स लक्ष्मी विलास बैंक परिसंपत्ति के लिहाज से देश का आठवां बड़ा निजी बैंक बन जाएगा।

यह विज्ञप्ति जारी करने के पीछे रिजर्व बैंक का मकसद उन अटकलों पर विराम लगाने का था जिनके मुताबिक इस विलय को उसने अनुमति दे दी है। लक्ष्मी विलास बैंक के बोर्ड में आरबीआई के नामित निदेशकों की मौजूदगी होने से इस अटकल को बल मिला। उसी तरह इंडियाबुल्स के बोर्ड में भी आरबीआई के दो पूर्व डिप्टी गवर्नर शामिल हैं। उनमें से एक एस एस मुंदरा प्रस्तावित विलय की निगरानी के लिए गठित पुनर्गठन समिति की अगुआई कर रहे हैं।

बहरहाल आरबीआई ने कहा है कि जब भी उसे विलय प्रस्ताव मिलेगा तो वह नियामकीय दिशानिर्देशों के हिसाब से उस पर गौर करेगा। मुझे लगता है कि किसी भी कंपनी ने अभी तक आरबीआई को इस विलय योजना का प्रस्ताव नहीं भेजा है क्योंकि भारतीय वित्तीय प्रणाली इस सौदे को लेकर विभाजित नजर आ रही है। यह मतभेद दोनों कंपनियों की वित्तीय स्थिति या एक बीमार बैंक के विलय का इंडियाबुल्स पर पड़ने वाले असर को लेकर नहीं बल्कि इस बात पर है कि आरबीआई को क्या इसे मंजूरी देनी चाहिए?

वैसे एक बैंक एवं एक गैर-बैंकिंग वित्तीय इकाई (एनबीएफसी) का विलय होना कोई नया मामला नहीं है। भारत फाइनैंशियल इन्क्लूजन लिमिटेड (पुराना नाम एसकेएस लिमिटेड) का इंडसइंड बैंक लिमिटेड के साथ विलय हो रहा है जबकि पहले आईडीएफसी बैंक के साथ कैपिटल फर्स्ट का विलय हो चुका है। उधर बंधन बैंक के साथ गृह फाइनैंस लिमिटेड के विलय की प्रक्रिया जारी है।

अगर कैपिटल फर्स्ट को आईडीएफसी बैंक में विलय के बाद बैंकिंग गतिविधियों का लाइसेंस दे दिया जाता है तो फिर इंडियाबुल्स को इस क्लब में शामिल करने में क्या आपत्ति है? आलोचकों का कहना है कि इंडियाबुल्स वर्ष 2014 में बैंकिंग लाइसेंस की प्रक्रिया में शामिल हुआ था लेकिन वह अंतिम सूची में जगह नहीं बना पाया था। सवाल है कि तब से अब तक क्या बदल गया है? इसके अलावा इंडियाबुल्स और कैपिटल फर्स्ट एक-दूसरे से काफी जुदा भी हैं।

कैपिटल फर्स्ट एक एनबीएफसी थी जिसका संचालन बैंकर से उद्यमी बने वी वैद्यनाथन कर रहे थे। इसकी तुलना में इंडियाबुल्स एक आवासीय वित्त कंपनी है जिसका समूह उपभोक्ता वित्त, बीमा, शेयर ब्रोकिंग और रियल एस्टेट में भी सक्रिय है।

वैद्यनाथन ने कैपिटल फर्स्ट में क्रेडिट अंडरराइटिंग और संग्रहण का एक गैर-परंपरागत मॉडल तैयार किया था। लेकिन मैकेनिकल इंजीनियर समीर गहलोत ने अपने कारोबारी सफर की शुरुआत 1999 में एक ऑनलाइन ब्रोकिंग फर्म से की थी। धीरे-धीरे इंडियाबुल्स समूह में कई कंपनियां जुड़ती गईं और आज यह परिसंपत्ति के मामले में देश की दूसरी बड़ी आवासीय वित्त कंपनी बन चुकी है। हालांकि बैंकिंग लाइसेंस के लिए अर्जी लगाने के बाद से काफी कुछ बदल चुका है। मसलन, वर्ष 2013 में समूह की कुल परिसंपत्तियों में रियल एस्टेट कारोबार का हिस्सा एक तिहाई था लेकिन अब वह घटकर दसवां हिस्सा रह गया है। गहलोत ने हाल में एक साक्षात्कार में कहा था कि बैंक में तब्दील हो जाने पर वह रियल एस्टेट कारोबार से पूरी तरह अलग हो जाना चाहते हैं।

इसके अलावा बैंकिंग लाइसेंस संबंधी नए निर्देश भी कहते हैं कि किसी आवेदक फर्म की कुल परिसंपत्ति में गैर-वित्तीय गतिविधियों की हिस्सेदारी 40 फीसदी से कम नहीं होनी चाहिए। इंडियाबुल्स के मामले में यह 20 फीसदी से कम है। एक नए बैंक के प्रवर्तकों की शेयरधारिता 10 वर्षों तक 30 फीसदी और 15वें वर्ष तक 15 फीसदी रहने का भी जिक्र है।

इंडियाबुल्स में फिलहाल 21.5 फीसदी की हिस्सेदारी रखने वाले गहलोत की विलय के बाद बनने वाली नई इकाई में हिस्सेदारी 19.5 फीसदी रह जाएगी लेकिन वह विलय के पहले इसे 15 फीसदी पर लाने के लिए इच्छुक हैं। वह बेहतर परिचालन सुनिश्चित करने के लिए अपनी कार्यकारी भूमिका छोड़ने को भी तैयार हो सकते हैं।

वर्ष 2014 में बैंकिंग लाइसेंस के लिए मना किए जाने के बाद इंडियाबुल्स ने नवंबर 2015 में ब्रिटेन के ओकनॉर्थ बैंक में करीब 40 फीसदी हिस्सेदारी ली थी। मेरा मानना है कि इंडियाबुल्स ने यह अधिग्रहण आरबीआई और बैंक ऑफ इंग्लैंड की अनुमति के बगैर नहीं किया होगा। नवंबर 2017 में इंडियाबुल्स ने इसमें से कुछ हिस्सा बेच दिया था और अपने निवेश से अधिक रकम बनाई थी।

अगर इंडियाबुल्स और लक्ष्मी विलास बैंक के बीच विलय प्रस्ताव को आरबीआई की अनुमति मिल जाती है तो भारत में भी इसे दोहराया जा सकता है। प्रस्तावित बैंक की परिसंपत्तियां असंगत तरीके से रियल एस्टेट की तरफ झुकी होंगी लेकिन पोर्टफोलियो में विविधता लाने के लिए इंडियाबुल्स उपभोक्ताओं के बड़े हिस्से को एसएमई योजनाएं बेच सकता है। गहलोत ने अपने साक्षात्कार में कहा है कि इंडियाबुल्स सरकारी प्रतिभूतियों और नकदी जमा करने संबंधी आरबीआई के मानकों में किसी तरह की ढिलाई की अपेक्षा नहीं करती है।

कई महीनों से इस प्रस्ताव पर चर्चा करने के बाद दोनों फर्मों के बोर्ड ने मुहर लगाई। सच कहें तो लक्ष्मी विलास बैंक के पास किसी मजबूत कंपनी के पास जाने के सिवाय बहुत कम विकल्प बचे थे और इंडियाबुल्स जैसी सभी एनबीएफसी को वजूद बचाए रखने और वृद्धि के लिए खुद को बैंक के रूप में तब्दील करना ही है।

मैं इस मामले में आरबीआई के रुख को लेकर कोई अनुमान नहीं लगाना चाहूंगा क्योंकि दूरसंचार या गैस कारोबार की तरह बैंकिंग क्षेत्र में लाइसेंस केवल सबसे ऊंची बोली लगाने वाले को ही नहीं मिलता है। आरबीआई बैंकिंग लाइसेंस उसी को देता है जिसे वह मुफीद और उपयुक्त पाता है। क्या इंडियाबुल्स इस मापदंड पर खरा उतरती है? हमें यह फैसला आरबीआई पर ही छोड़ देना चाहिए लेकिन कोई भी व्यक्ति इससे इनकार नहीं कर सकता है कि भारत को प्रतिस्पर्द्धा एवं उपभोक्ताओं की देखभाल के लिए अधिक बैंकों की जरूरत है। एनबीएफसी भी अपने मौजूदा स्वरूप में नहीं बनी रह सकती हैं। अगर लक्ष्मी विलास बैंक का किसी अन्य बैंक में विलय किया जाता है तो फिर एक बैंक कम हो जाएगा।

भारत एनबीएफसी के लिए ऐतिहासिक रूप से स्वर्ग रहा है। वर्ष 1997 में आरबीआई अधिनियम को संशोधित कर एनबीएफसी के नियमन का व्यापक ढांचा बनाया गया था। उस समय देश में करीब 40,000 एनबीएफसी सक्रिय थीं। नए नियम आने के बाद करीब एक हजार एनबीएफसी के पास समुचित पूंजी नहीं होने से उनके लाइसेंस निरस्त किए जा चुके हैं। इस समय भी 9,000 से अधिक एनबीएफसी सक्रिय हैं।

लेकिन बैंकिंग परिदृश्य काफी अलग है। अगर हम क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों, स्थानीय क्षेत्र के बैंकों और भुगतान बैंकों को हटा दें तो भारत में 96 बैंक हैं यानी 1.38 करोड़ आबादी पर एक बैंक है। लेकिन सभी तरह के बैंकों को जोड़ दें तो एक बैंक 82 लाख भारतीयों को सेवा दे रहा है। अगर अमेरिका से इसकी तुलना करें तो वहां कुल 5,358 बैंक सक्रिय हैं यानी 59,724 लोगों पर एक बैंक का अनुपात है। हमारे पड़ोसी देश श्रीलंका में भी एक बैंक औसतन 8.27 लाख लोगों को सेवा दे रहा है।

एनबीएफसी में जमा की व्यवस्था न होने से उन्हें बैंक की तुलना में व्यवस्थागत स्थायित्व के लिए कम खतरनाक मानने का तर्क एक छलावा भर है। बड़ी एनबीएफसी भी लोगों के पैसे से ताल्लुक रखने के नाते समान व्यवस्थागत जोखिम रखती हैं। भले ही यह पैसा सार्वजनिक जमा के रूप में नहीं होता है लेकिन बैंकों एवं म्युचुअल फंडों से उधार लिया गया पैसा क्या सार्वजनिक नहीं होता है?

(लेखक बिज़नेस स्टैंडर्ड के सलाहकार संपादक एवं जन स्माल फाइनैंस बैंक लिमिटेड के वरिष्ठ परामर्शदाता हैं)

विपक्ष के साथ भाजपा-आरएसएस से भी मोदी का मुकाबला

सम सामयिक

टीसीए श्रीनिवास-राघवन

पांसे जिधर भी गिरें लेकिन अगली सरकार तो भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) ही बनाएगी। इसकी वजह यह है कि कोई भी चुनाव-पूर्व औपचारिक गठबंधन नहीं होने से राष्ट्रपति सबसे बड़े दल को ही सरकार बनाने के लिए आमंत्रित करने को बाध्य हैं। केवल चमत्कार की हद तक का बड़ा उलटफेर ही कोई अलग परिणाम दे सकता है।

पहले भी लोग इसे जानते थे लेकिन कुछ समय के लिए ऐसी चर्चाएं चल रही थीं कि नरेंद्र मोदी दोबारा प्रधानमंत्री नहीं बन पाएंगे। लेकिन मोदी ने इन चुनौतियों को गलत साबित कर दिया है।

पिछले छह हफ्तों से वह राजनीतिक पटल पर पूरी तरह हावी हैं। वास्तव में, उन्होंने 2019 के आम चुनाव को तिकोने मुकाबले- विपक्ष बनाम भाजपा बनाम मोदी में तब्दील कर दिया है। मोदी मूलत: मतदाता से यही बात कह रहे हैं: 'भाई, मैं तुम्हारा आदमी हूं। कभी भी पार्टी या उम्मीदवार पर ध्यान न दो। मेरे लिए वोट करो क्योंकि मैं ही सबकुछ हूं।'

ऐसा लगता है कि मोदी पर्याप्त मतदाताओं को यह समझाने में सफल रहे हैं कि उनके अपने आदमी वही हैं। इसका परिणाम यह हुआ कि आज जब मतदाता ईवीएम का बटन दबा रहा है तो वह भाजपा के लिए नहीं बल्कि मोदी के लिए वोट कर रहा है। यहां तक कि कुछ समय तक मोदी से नाखुश रहे राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ (आरएसएस) को भी अब यह मानना पड़ा है कि मोदी ने उसे मात दे दी है। मुझे उम्मीद है कि एक दिन यह कहानी सुनाई जाएगी कि आरएसएस को मोदी ने किस तरह अपने वश में किया? यह कुछ वैसा ही है जिस तरह इंदिरा गांधी ने भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी (भाकपा) और मनमोहन सिंह ने मार्क्सवादी कम्युनिस्ट पार्टी (माकपा) से छुटकारा पाया था। इसका सार यह है कि कभी भी किसी पर बहुत दबाव मत डालिए।

परवर्ती काल की इंदिरा गांधी की तरह मोदी वृत्तांत का 'मैं-मैं-मैं' में बदलते जाना अच्छा है या बुरा, इसका फैसला राजनीतिक पंडितों पर छोड़ देना चाहिए। अर्थशास्त्रियों की तरह अधिकतर राजनीतिक पंडितों का दिमाग भी 20वीं सदी का है। लिहाजा उनका रवैया पुराना हो चुका है। लेकिन तथ्य यह है कि 1990 के बाद पहली बार केंद्रीय स्तर पर उपलब्ध विकल्प विशुद्ध रूप से शख्सियत-आधारित है। हम किसी एक दल को नहीं बल्कि एक व्यक्ति को चुन रहे हैं।

प्रधानमंत्री को लेकर तमाम चुटकुले एवं जुमले चलते रहे हैं। राज्यों में हमेशा ऐसी बातें होती रही हैं। लेकिन केंद्रीय स्तर पर इससे अलग होने के बारे में सोचना दूर की कौड़ी ही है।

चुनाव प्रक्रिया आगे बढ़ने के साथ ही मैंने मोदी के दूसरे कार्यकाल में उनकी आर्थिक नीतियों के काफी अलग रहने की बातें करनी शुरू कर दी हैं। अपने पहले कार्यकाल में वह छोटी-छोटी बातों पर ध्यान देते रहे क्योंकि वह बाकी चीजों के साथ बहुत सहज नहीं थे। एक मुख्यमंत्री की पृष्ठभूमि होने के नाते ऐसा होना अवश्यंभावी था। अक्षय कुमार को दिए अपने साक्षात्कार में मोदी ने कहा भी है कि एक मुख्यमंत्री को छोटी बातों पर ज्यादा ध्यान देना पड़ता है।

लेकिन अब हम मोदी से अधिक आत्मविश्वासी प्रधानमंत्री के रूप में दिखाई देने की उम्मीद कर सकते हैं जो ढांचागत सुधारों पर बल दें। भारत को एक सक्षम प्रतिस्पर्द्धी अर्थव्यवस्था बनाने के लिए वह हर जरूरी काम करेंगे। याद रखें कि एक प्रतिस्पर्द्धी अर्थव्यवस्था (चीन) का सक्षम होना जरूरी नहीं है और एक सक्षम अर्थव्यवस्था (सभी पश्चिमी देश) का प्रतिस्पर्द्धी होना जरूरी नहीं है।

अगर मोदी मुझसे पूछते तो मैं उन्हें बताता कि उन्हें कांग्रेस की जिस विरासत से छुटकारा दिलाने की जरूरत है, वह नेहरु का सामाजिक एवं राजनीतिक दर्शन नहीं बल्कि उनकी बेटी इंदिरा का आर्थिक दर्शन है। खुद मनमोहन सिंह भी इंदिरा की आर्थिक नीतियों के आलोचक रहे हैं। मनमोहन ने 1983 में ही इंडिया टुडे के लिए टी एन नाइनन को दिए एक साक्षात्कार में इन नीतियों पर सवाल उठाए थे।

समस्या यही है। इंदिरा गांधी ने सक्षमता पर समता को तवज्जो देकर राजनीतिक रूप से लुभावनी लेकिन आर्थिक रूप से विनाशकारी विरासत अपने पीछे छोड़कर भारत की सक्षमता और प्रतिस्पर्द्धा दोनों को काफी हद तक नष्ट कर दिया। उसके बाद आने वाली हरेक सरकार उसी विरासत को आगे बढ़ाती रही। इसका असर यह हुआ कि उत्पादन के तीनों अवयव- जमीन, श्रम एवं पूंजी काफी महंगे हो गए। अपने प्रतिस्पर्द्धियों की तुलना में भारत के काफी पीछे रह जाने की वजह यही है। मोदी वी2 को इसी विरासत से छुटकारा पाना है।

यह काफी अहम होगा कि अगली सरकार इस मकसद को हासिल करने के लिए किसी क्रम में आदेश जारी करती है? वर्ष 2014 में मोदी ने शुरुआती दौर में जमीन एवं श्रम से जुड़े मसलों पर हाथ आजमाया था लेकिन उन्हें नाकामी झेलनी पड़ी थी। इसका नतीजा यह हुआ कि वह पूंजी की समस्या का भी निदान नहीं तलाश पाए क्योंकि उन्हें अधिक उधारी लेने के लिए बाध्य होना पड़ा जिससे पूंजी और महंगी हो गई। भारतीय अर्थव्यवस्था की मौजूदा समस्याएं काफी हद तक इसी वजह से हैं।

इस बार मोदी को बाजार से कम उधार लेना होगा ताकि निजी क्षेत्र अधिक उधार ले सके। सरकार को जमीन की समस्या पर नए सिरे से गौर करना होगा। अगर ऐसा होता है तो राज्य अपने स्तर पर ही श्रम कानूनों की दुश्वारियों से निपट लेंगे क्योंकि ऐसा नहीं होने पर उन्हें कोई निवेश ही नहीं मिल पाएगा।

वर्ष 2014 में प्रधानमंत्री बनने के बाद संसद पहुंचने पर मोदी ने अपने पहले संबोधन में कहा था कि उन्हें 10 साल का वक्त चाहिए। अब ऐसा होने की संभावना बढ़ती देख उन्हें अपनी आर्थिक विरासत छोड़ने पर ध्यान देना चाहिए।

कानाफूसी

ढोकला से खोखला

मौजूदा लोकसभा चुनाव में प्रमुख विपक्षी दल यानी कांग्रेस, भारतीय जनता पार्टी के नेतृत्व वाली राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन (राजग) सरकार पर हमले करने के लिए लगातार नए तरीके अपना रही है। उसका ताजा प्रयास नारों के माध्यम से भाजपा पर हमला बोलने का है। कांग्रेस पार्टी की आईटी और मीडिया सेल ने एक नया नारा तैयार किया है- विकास के नाम पर सबको ढोकला दे दिया/ दो गुजरातियों ने देश को खोखला कर दिया। इतना ही नहीं पार्टी ने अनेक क्षेत्रीय भाषाओं में इस नारे का स्थानीय संस्करण भी तैयार किया है। पार्टी द्वारा नारों के क्षेत्रीय और भाषायी संस्करण तैयार करवाने का मकसद भी एकदम स्पष्ट है। वह चाहती है कि देश के उपनगरीय इलाकों में रहने वाले और ग्रामीण क्षेत्रों के निवासी मतदाता भी पार्टी के नारों से अवगत रहते रहें।

पिता-पुत्र और चुनाव

मौजूदा चुनावी मौसम में मध्य प्रदेश की छिंदवाड़ा सीट देश भर में चर्चा में है। यह इकलौती सीट है जहां से पिता-पुत्र की जोड़ी चुनाव मैदान में उतरी हुई है। मध्य प्रदेश के मुख्यमंत्री कमलनाथ जहां छिंदवाड़ा विधानसभा क्षेत्र के उपचुनाव में कांग्रेस के प्रत्याशी हैं वहीं उनके बेटे नकुलनाथ छिंदवाड़ा लोकसभा सीट से पार्टी की ओर से लड़ रहे हैं। पिता-पुत्र की जोड़ी को कई स्थानों पर चुनावी रैलियों में एक साथ देखा गया। दोनों अपने भाषणों में केवल विकास की बात करते हैं। नकुलनाथ इन चुनावों की मदद से अपने राजनीतिक करियर की शुरुआत कर रहे हैं। उनका सामना भारतीय जनता पार्टी के आदिवासी नेता और पूर्व विधायक नाथन शाह कवरेती से है। नकुलनाथ ने वादा किया है कि वे अपने पिता के विकास कार्यों को जारी रखेंगे।

आपका पक्ष

लोकसभा चुनाव में आवारा पशु भी मुद्दा

लोकसभा चुनाव के दौरान उत्तर प्रदेश में दलों द्वारा आयोजित रैलियों में इन दिनों आवारा पशु चर्चा में है। प्रदेश के पशुपालन विभाग का दावा है कि राज्य में 11 लाख आवारा गोवंश हैं। आखिरी पशुगणना 2012 में हुई थी। ग्रामीणों का मानना है कि हर ग्राम पंचायत में करीब 100 आवारा पशु होंगे। राज्य में 59 हजार से अधिक ग्राम पंचायत है। गोवंश कल्याण के लिए योगी सरकार ने 2019-20 के बजट में 612.6 करोड़ रुपये का प्रावधान किया था। प्रदेश की भाजपा सरकार आवारा पशुओं से परेशान हैं। सपा तथा बसपा आवारा पशु को मुद्दा बनाने में जुटी हैं। सपा अध्यक्ष अखिलेश यादव आवारा पशुओं के वीडियो सोशल मीडिया में पोस्ट कर सरकार की खिंचाई कर रहे हैं। इससे पहले कन्नौज में आयोजित अखिलेश की सभा से पहले हैलीपैड में आवारा पशु घुस गए जिससे हेलीकॉप्टर 15 मिनट बाद उतर पाया। इस घटना के बाद अखिलेश ने सोशल मीडिया में सरकार की खिंचाई कर दी। सपा-बसपा योगी सरकार पर आरोप लगा रहे हैं कि वह आवारा पशुओं के जरिये उन्हें रैलियों में जाने से रोकने की कोशिश कर रही है। बसपा प्रमुख मायावती ने भी जालौन में यही आरोप लगाया। हालांकि आवारा पशु केवल विपक्षी दलों के नेताओं को ही परेशान नहीं कर रहे बल्कि उन्होंने मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ को भी परेशान किया। एक आवारा पशु मुख्यमंत्री के हेलीकॉप्टर के लिए बने हैलीपैड में चला आया था। इस घटना के बाद प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की रैलियों से पहले रात दिन अभियान चलाकर आवारा पशुओं की धरपकड़ की गई।

रितेश कुमार, संत कबीर नगर

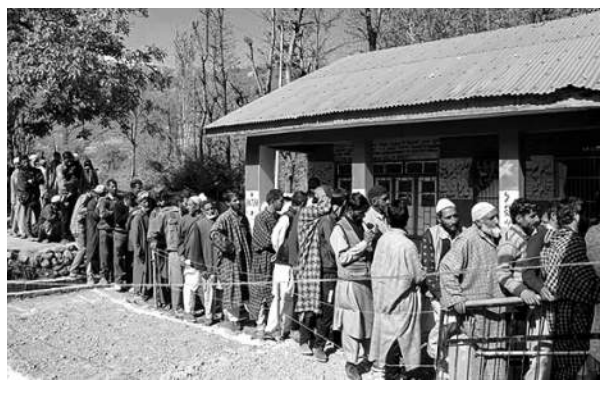

लोकसभा चुनाव के चौथे चरण के लिए जम्मू-कश्मीर के कुलगाम में मतदान करते लोग *-पीटीआई*

मच्छरजनित रोगों से बचाव जरूरी

विगत 25 अप्रैल को मलेरिया दिवस के रूप में मनाया गया। दुनिया में मच्छरजनित जानलेवा बीमारियां आम होती जा रही हैं। इसमें मलेरिया, डेंगू, चिकनगुनिया आदि बीमारी का इलाज नहीं होने से मृत्यु हो जाती है। विश्व स्वास्थ्य संगठन की हालिया रिपोर्ट बताती हैं कि वर्ष 2015-2017 के बीच विश्व में मलेरिया के मामले कम करने में उल्लेखनीय प्रगति नहीं हुई। वर्ष 2017 में अनुमानित 21.9 करोड़ मामले और 4,35,000 मौतें हुई। विश्व मलेरिया रिपोर्ट 87 देशों और उन क्षेत्रों के आंकड़ों पर आधारित है जिनमें मलेरिया का प्रसार जारी है। यह जानकारी राष्ट्रीय घरेलू सर्वेक्षण और अन्य संगठनों के डेटा से ली गई है। भारत में नैशनल वेक्टर बोर्न डिजीज कंट्रोल प्रोग्राम के रिपोर्ट के अनुसार 2018 में 3,99,134 मलेरिया के मामले सामने आए जिनमें 85 लोगों की मृत्यु हो गई। ओडिशा में सबसे अधिक 40 प्रतिशत मलेरिया के रोगी पाए गए। विश्व स्वास्थ्य संगठन आरटीएस वैक्सीन ऐसे देशों को मुहैया कराएगा जहां मच्छरजनित बीमारियां बड़े पैमाने पर हैं। एक कंपनी द्वारा 1 करोड़ वैक्सीन दान की जाएगी ताकि गरीब लोगों की जान बच सके। इसके अलावा मलेरिया की रोकथाम के लिए अन्य कदम भी उठाना जरूरी है। देश में प्राथमिक उपचार केंद्रों की सुविधाएं बढ़ाने और ग्रामीण क्षेत्रों में डॉक्टरों की मौजूदगी जरूरी है जिससे आपात स्थिति में मरीजों का इलाज हो सके।

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिजनेस स्टैंडर्ड लिमिटेड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली - 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in उस जगह का उल्लेख अवश्य करें, जहां से आप ईमेल कर रहे हैं।